MAH/MUL/03051/2012
ISSN-2319 9318

Vidyawarta®

International Multilingual Research Journal

Issue-22, Vol-10 April to June 2018

Editor

Dr.Bapu G.Gholap

Scanned with CamScanner

https://sites.google.com/site/vidyawartajournal | http://www.vidyawarta.blogspot.com

27) प्रगतिशील साहित्य और केदारनाथ अग्रवाल
संतोष नागरे || 125

28) राष्ट्र–शक्ति निर्माण में विवेकानन्द जी का योगदान
डॉ. विनी शर्मा || 128

29) श्रीगंगानगर जिले में शस्य गहनता : एक भौगोलिक अध्ययन
डॉ. श्योपतराम सहारण || 135

30) संयुक्त परिवार के मूल्यों का टूटन :'माटी कहे कुम्हार से'
डॉ. श्रीकांत पाटील || 138

31) यू.पी. बोर्ड व सी.बी.एस.ई. बोर्ड से सम्बन्धित विद्यालयो में .....
अशोक कुमार शर्मा || 140

32) ''मृदुला गर्ग के उपन्यासों मे प्रेम सम्बन्ध''
गणेश सिंह || 143

33) भारत मे महिला–पुरूष अनुपात में परिवर्तन
डॉ. गीतांजली सूर्यवंशी || 146

34) मध्यकालीन भक्ति आन्दोलन में नारी
डॉ. गुड्डी चमोली || 151

35) शिवानी के उपन्यासों का समाजशास्त्र
प्रविता देवी || 154

36) औपनिवेशिक भारत में स्थानीय निकाय और शिक्षा का हस्तान्तरण.....
ब्रजेन्द्र कुमार' || 157

37) हिन्दी साहित्य में नारी के बदलते रूप
कृष्णा राणा || 161

38) ग्वालियर क्षेत्र के कला एवं विज्ञान वर्ग के छात्र एवं छात्राओं .....
डॉ. रूद्र प्रताप यादव || 165

39) परिवर्तित ग्रामीण समाज का समाजशास्त्रीय अध्ययन
डॉ. वन्दना || 169

Scanned with CamScanner

27

प्रगतिशील साहित्य और केदारनाथ अग्रवाल

संतोष नागरे
सहा.प्रा.- हिन्दी विभाग
र.भ.अट्टल महाविद्यालय,
गेवराई जि.बीड

केदारनाथ अग्रवाल प्रगतिशील साहित्यधारा के शीर्षस्थ रचनाकार है। केदारनाथ अग्रवाल ने पद्य तथा गद्य की विधाओं में सशक्त लेखन कर प्रगतिशील साहित्यधारा को समृध्द किया। 'प्रगति' से तात्पर्य- उन्नति करना, आगे बढ़ना, विकास करना है। विकास के प्रति प्रतिबध्दता ही प्रगतिशीलता है। प्रगतिशील लेखक संघ का प्रथम अधिवेशन १९३६ में प्रेमचंद जी की अध्यक्षता में लखनऊ में सम्पन्न हुआ। जिसका उद्देश्य साम्राज्यवादी सामंतवादी-पूँजीवादी व्यवस्था की शोषण चक्की में पिसती जनता को मुक्त करना था। जनकल्याण ही इसका लक्ष्य रहा है। डॉ.पद्मा पाटील इस संदर्भ में कहती है,- ''प्रगतिशील चेतना में लोकमंगल की भावना होना आवश्यक है। प्रगतिशीलता केवल प्रतिक्रिया के नजदीक नही होती, तो उसमें नवीनता का आग्रह होता है। उसमें मानवीय संवेदनाओं का प्राधान्य रहता है। वह तो जीवन के कल्याण में ही विश्वास रखती है।''[1] अत: शोषित उत्पीड़ित जन-जीवन की पक्षधरता, शोषण का विरोध, वामपंथी रुझान : मार्क्सवाद और रुस के प्रति झुकाव, समसामयिक यथार्थ का चित्रण तथा सामाजिक परिवर्तन की कामना, ग्रामीण प्राकृतिक परिवेश और ग्राम जीवन के प्रति असीम लगाव, स्वस्थ प्रणय भावना, शिल्पगत नवीनता आदि इसकी विशेषताएँ हैं।

प्रगतिवाद की तुलना में प्रगतिशीलता का फलक व्यापक तथा विराट है। डॉ.हणमंतराव पाटील इस संदर्भ में कहते है,- ''प्रगतिशील साहित्य न द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद तक सीमित है, न इसमें वर्ग-संघर्ष, न सामाजिक यथार्थवाद और ऐतिहासिक भौतिकवाद की ही प्रधानता है, न यह मार्क्सवाद का साहित्यिक प्रतिफलन है, वरन मार्क्सीय चेतना से प्रभावित होते हुए भी यह मानववाद, समाजवाद और आम-आदमी के दुःख दर्दों का गायक है। इसका फलक व्यापक तथा विराट है, जो देश, समाज, जन की समस्याओं को औचित्य की वाणी देता है।''[2] प्रगतिशील साहित्य के केन्द्र में जनता रही है। अत: जनता की तरफदारी करनेवाला साहित्य ही प्रगतिशील साहित्य है। प्रगतिशील साहित्य को लेकर काव्य सृजन करनेवाले कवियों में सुमित्रानंदन पंत, सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला', नागार्जुन, त्रिलोचन, केदारनाथ अग्रवाल, शिवमंगलसिंह 'सुमन', रामविलास शर्मा, शमशेर, मुक्तिबोध, अरुण कमल आदि का महत्वपूर्ण योगदान रहा है।

केदारनाथ अग्रवाल प्रगतिशील हिंदी कविता के प्रमुख हस्ताक्षर हैं। केदार जी की कविता का विकास वस्तुत: प्रगतिशील हिंदी कविता का विकास है। अशोक त्रिपाठी इस संदर्भ में कहते हैं,- ''केदार जी प्रगतिशील कविता के प्रसव, शैशव, तरुणाई, यौवन और उसके आज तक के विकास के अनेक मोडों के मिल के पत्थर है। प्रगतिशील कविता का इतिहास केदारनाथ अग्रवाल की कविता का विकास है।''[3] केदार जी की कविता को समझना प्रगतिशील हिन्दी कविता को समझने के बराबर है। क्योंकि- ''केदारनाथ अग्रवाल को छोड़कर प्रगतिशील कविता का मूल्यांकन असम्भव है।''[4]

केदारनाथ अग्रवाल अपनी प्रगतिशीलता के संदर्भ में स्वयं कहते है- ''लोग तो प्रगतिशील कविता में राजनीति की चर्चा मात्र ही चाहते हैं, वे कविताएँ जो प्रेम से, प्रकृति से, आस-पास के आदमियों से, सुन्दर दृश्यों से, यथावत चल रहे व्यवहारों से और इसीतरह की अनेक रूपताओं से विरचित होती है, प्रगतिशीलता नही मानी जाती। मेरी प्रगतिशीलता में इन तथाकथित वर्जित विषयों का बहिष्कार नही है, वह इन विषयों के सन्दर्भ में उपजी हुई प्रगतिशीलता है।''[5] इससे स्पष्ट होता है कि केदारनाथ अग्रवाल की प्रगतिशीलता पार्टीवाद के सीमित कटघरे से मुक्त है तथा वह जन-जीवन के साथ पूरी तरह से जुड़ी हुई है। केदारनाथ अग्रवाल कहते हैं- मेरी प्रगतिशीलता कइयों की प्रगतिशीलता से भिन्न रही है। मैंने अपने दार्शनिक सिध्दांतों को कविता को कसने की कसौटी नही बनाया। वह 'पार्टी-वाद' होता और उस उस 'पार्टी-वाद' से परखना इस अपने युग की काव्य उपलब्धियों के साथ न्याय सम्मत न होता। यही सोचकर और समझकर मैंने 'पार्टीवाद' से बाहर निकलकर 'आदमीवाद' अपनाया और कविता को आदमियत की परख से परखा। आदमियत को मैंने संकुचित या साम्राज्यवादी या धर्मवादी या पूँजीवादी या साम्राज्यवादी दृष्टीकोण से नही पकड़ा।''[6]

१९३६ में भारतीय प्रगतिशील लेखक संघ की स्थापना हुई, उस समय स्वाधीनता आन्दोलन अपने चरमोत्कर्ष पर था। प्रगतिशील रचनाकारों ने स्वाधीनता आन्दोलन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हुए साम्राज्यवादी-शोषणकारी-अंग्रेजी व्यवस्था के विरुध्द आवाज उठाई

Scanned with CamScanner

तथा जनता को स्वाधीनता आंदोलन में भाग लेने के लिए प्रेरित किया। भारतीय जन गुलामी ब्रिटिश साम्राज्य के विरुद्ध घन के समान गरज उठे। केदारनाथ अग्रवाल कहते हैं,-

"घन गरजे-जन गरजे / देख नाश का ताण्डव बर्बर
एक बोध से / घन गरजे-जन गरजे।"[8]

आजादी के पूर्व ही प्रगतिशील रचनाकारों के मन में आजादी को लेकर जो आशंका थी, वह १९४७ के पश्चात सत्य साबित हुई। स्वतंत्रता के पश्चात देश की शासन-व्यवस्था अंग्रेजी साम्राज्यवादियों के उत्तराधिकारी भारतीय पूँजीपतियों के हाथों में आयी। केदारनाथ अग्रवाल इस संदर्भ में कहते हैं- "जब अंग्रेजों से देश को स्वतंत्रता मिली, तो वास्तव में आम-जनता को नहीं, सामंतों, धनाढ्यों, वकीलों और बौद्धिकों को मिली।"[9] देश की स्वतंत्रता के साथ ही हमें देश विभाजन की त्रासदी से गुजरना पड़ा। देश विभाजन के पश्चात उपजे साम्प्रदायिक उन्माद की भयावहता से मानवता सिहर उठी। परिणामतः आजादी के पश्चात अंग्रेजों से भी भयावह दमन, अन्याय एवं अत्याचार होते रहे। देश की इस दुर्दशा से आहत केदारनाथ अग्रवाल कहते हैं,-

देश की छाती दरकते देखता हूँ ! / धान खद्दर के लपेटे स्वार्थियों को
पेट-पूजा की कमाई में जुता मैं देखता हूँ ! / सत्य के जारज सुतों को
लंदनी गौरंग प्रभु की / लीक चलते देखता हूँ ! / डालरी साम्राज्यवादी
मौत घर में
आँख मूँदे डांस करते देखता हूँ !!"[10]

आजादी के पश्चात पूँजीवादी-राजनीतिक सत्ता के साम्राज्यवादी-सामंतवादी गठजोड़ ने आम-आदमी को शोषण की चक्की में निरंतर पिसना शुरु किया। परिणामतः अमीर और गरीब के बीच की दूरी बढ़ती ही जा रही है। भ्रष्टाचार, सामाजिक-धार्मिक पाखण्ड एवं अंधविश्वास, साम्प्रदायिकता, जाति-पाति, भ्रष्ट न्यायव्यवस्था समाज को खोखला कर रही है। आम-आदमी रोटी, कपड़ा, मकान, शिक्षा, आरोग्य जैसी जरुरतों को पूरा करने में ही अपना जीवन खपा रहा है। अच्छे दिन के दिवा स्वप्न दिखाकर सरकार जनता को भ्रम की भूल-भूलैया में भटका रही है। केदारनाथ अग्रवाल इसकी पोल खोलते हुए कहते हैं,-

"सरकार का 'अच्छा कुछ' / न समाजवाद है / न
अध्यात्मवाद- / न भौतिकवाद
भ्रम है भ्रम / घटिया भ्रम / जो राजनीति में बढ़ रहा है
बुखार की तरह चढ़ रहा है।"[11]

केदारनाथ अग्रवाल शोषित-उत्पीड़ित जन-जीवन के साथ अभिन्न रुप से जुड़े हुए रचनाकार हैं। शोषित-उत्पीड़ित वर्ग ही श्रम संस्कृति का संवाहक है। श्रमजीवी वर्ग तथा भीड़ का यथार्थ आदमी ही केदारनाथ अग्रवाल का आदर्श है, जो अपने चरित्र के बल पर केदार जी को देवदार से भी बड़ा दिखाई देता है। श्रमजीवी वर्ग के छोटे हाथों में ही मिट्टी को सोना बनाने की अपूर्व क्षमता है। इसीलिए केदारनाथ अग्रवाल जी की रचनाओं में श्रम सौन्दर्य अपने चरमोत्कर्ष रुप में पाया जाता है। केदारनाथ अग्रवाल श्रमजीवी वर्ग के प्रति अपनी प्रतिबद्धता को बयान करते हैं,-

"छोटे हाथ / नहीं रुकते हैं / और नहीं धीरज धरते हैं
जड़ को चेतन / पानी को पय / मिट्टी को सोना करते हैं
छोटे हाथ- किसानी करते / बीज नये बोया करते हैं
आनेवाले वैभव के दिन / उँगली से टोया करते हैं।"[12]

श्रमजीवी भारतीय ग्रामीण नारी भी अपने श्रम से नयी दुनिया का सृजन करती है। ग्रामीण नारी की संघर्षमय जीवन यात्रा को बयान करते हुए केदानाथ अग्रवाल कहते हैं,-

"मूसल, चक्की, कुटना, पिसना / सब लड़के से करती है
खपरे छाये कच्चे घर में / रामराज्य में रहती है
भेड़ों को, बकरी को ले कर / हार चराने जाती है
घम-घम घाम हवा खाती है / दिन छिपते फिर आती है
कौड़ी मोल नहीं रखती है, आँख भर कर रोती है
धरती माता की गोदी में, सोती चुपके सोती है।"[13]

प्रस्तुत रचना में केदारनाथ अग्रवाल द्वारा रचित 'पतिया' उपन्यास की प्रमुख पात्र पतिया के संघर्ष की स्पष्ट झलक देखने को मिलती है। श्रमजीवी संघर्षशील वर्ग के प्रति केदार जी की गहरी आस्था रही है। मधुच्छंदा इस संदर्भ में कहती हैं- केदारनाथ अग्रवाल की प्रगतिशीलता का मुख्य आधार श्रमजीवी जनता में आस्था है।"[14] केदारनाथ अग्रवाल शोषणमुक्त समताधिष्ठित समाजवादी समाज व्यवस्था के आकांक्षी थे। अपनी इस लक्ष्यप्राप्ति के लिए उन्होंने वामपंथी विचारधारा को अपनाया और आजीवन उसी के साथ जुड़े रहे। आपकी रचनाओं में मार्क्सवाद, रुस के प्रति झुकाव, लाल रंग, हथौड़ा, हँसिया के चित्रण से वामपंथी रुझान की पहचान होती है। पेड़ के माध्यम से मार्क्सवादी चेतना को बयान करते हुए केदारनाथ अग्रवाल कहते हैं-

आग लेने गया है / पेड़ का हाथ-
आदमी के लिए / टूटी डाल- नहीं टूटी।"[15]

प्रगतिशील रचनाकारों का ग्रामीण प्राकृतिक परिवेश के प्रति गहरा लगाव रहा है। ग्रामीण प्राकृतिक परिवेश से उन्हें जीवन संघर्ष की प्रेरणा मिलती है। केदारनाथ अग्रवाल प्रकृति को किसान की स्वस्थ नजर से देखते हैं। गेहूँ के माध्यम से साम्राज्यवादी शोषणकारी शक्तियों के विरुद्ध लड़ती रुसी लाल फौज का तो चना, सरसों, अलसी के माध्यम से स्वयंवर का सुंदर चित्रण किया है। केदारजी ने प्रकृति

Scanned with CamScanner

सौन्दर्य के साथ ही प्रकृति की कर्मठता तथा संघर्षशीलता को बखूबी व्यक्त किया। तेज धार का कर्मठ पानी बाधक चट्टानों को घूँसे मारते हुए प्रगति के ओर कदम बढ़ाता है। केदारनाथ अग्रवाल कहते हैं,-

"तेज धार का कर्मठ पानी / चट्टानों के ऊपर चढ़कर
मार रहा है घूँसे कसकर / तोड़ रहा है तट चट्टानी।"[५]

प्रकृति के साथ ही केदार जी की रचनाओं में प्रेम के विविध रुपों की मर्मस्पर्शी अभिव्यक्ति देखने को मिलती है। स्वस्थ सामाजिक संदर्भों से युक्त केदार जी की प्रेम कविताएँ जीवन जीने की शक्ति प्रदान करती है। पारिवारिक विघटन के इस दौर में केदार जी की प्रेम कविताएँ दिशादर्शक है। डॉ.मृत्युंजय उपाध्याय इस संदर्भ में ठीक ही कहते हैं- आज सामाजिक और पारिवारिक जीवन में जो विघटन और तनाव तथा बिखराव आ रहे हैं, उसे सहजने की दृष्टि से इन कविताओं का बड़ा महत्व है।"[६] केदार जी को अपनी पत्नी प्रिया पार्वती देवी जी से जीवन जीने की अपार प्रेरणा मिलती है। केदारनाथ अग्रवाल कहते हैं,-

"हे मेरी तुम ! / कटु यथार्थ से लड़ते - लड़ते
अब न लड़ा जाता है मुझसे / हे मेरी तुम !
अब तुम ही थोड़ा मुसकुरा दो / जीने का उल्लास जगा दो।"[७]

जनता के साथ अभिन्न रुप से जुड़े कवि केदार जी ने जनभाषा के माध्यम से जन-भावनाओं को वाणी दी। आपकी रचनाओं की भाषा में सहजता, सरलता, बोधगम्यता के साथ ही व्यंग्य का पैनापन पाया जाता है।

सारांश :-

केदारनाथ अग्रवाल प्रगतिशील साहित्यधारा के श्रेष्ठ रचनाकार है। आपकी रचनाओं में प्रेमचंद तथा 'निराला' जी की प्रगतिशील साहित्य परंपरा का विस्तार है। केदानाथ अग्रवाल की प्रगतिशीलता में लोकमंगल की भावना सर्वोपरी होने से वह पार्टीवाद से मुक्त है। शोषित- उत्पीड़ित श्रमजीवी वर्ग के प्रति आपके मन में गहरी करुणा है। केदारनाथ अग्रवाल शोषणकारी व्यवस्था को नष्ट कर स्वस्थ, सुंदर एवं शोषण मुक्त समाज निर्माण के लिए प्रयासरत हैं। कुल मिलाकर प्रगतिशील साहित्य के मानदण्डों पर निर्मित केदारनाथ अग्रवाल का साहित्य निखरकर सामने आता है।

संदर्भ ग्रंथ :-

१. डॉ. पदमा पाटील, यहीं से देखो : एक अध्ययन, पृ. ३२.

२. डॉ. हणमंतराव पाटील, निराला और मुक्तिबोध की प्रगतिशील कविता, प्राक्कथन.

३. सम्पा. अशोक त्रिपाठी, कहें केदार खरी-खरी, भू. पृ.१०.

४. डॉ. हरिनारायण पाण्डेय, प्रगतिशील काव्यधारा और विलोचन, पृ.१४९.

५. केदारनाथ अग्रवाल, अपूर्वा, भू. पृ.१२.

६. केदारनाथ अग्रवाल, समय-समय पर, पृ.०६

७. केदारनाथ अग्रवाल, फूल नहीं, रंग बोलते हैं, पृ.२५

८. केदारनाथ अग्रवाल, बोले-बोल अबोल, भूमिका पृ.०९

९. सम्पा. अशोक त्रिपाठी, कहें केदार खरी-खरी, पृ.६५.

१०. केदारनाथ अग्रवाल, मार प्यार की थापें, पृ. ७७

११. केदारनाथ अग्रवाल, गुलमेंहदी, पृ.१३३.

१२. केदारनाथ अग्रवाल, जो शिलाएँ तोड़ते हैं, पृ. १५१.

१३. डॉ.मधुच्छंदा, श्रम का सौन्दर्यशास्त्र और केदारनाथ अग्रवाल का काव्य, पृ.१४८

१४. केदारनाथ अग्रवाल, आग का आईना, पृ.४८

१५. केदारनाथ अग्रवाल, फूल नहीं, रंग बोलते हैं, पृ.९९.

१६. डॉ. मृत्युंजय उपाध्याय, हिंदी की प्रगतिशील कविता- स्वरुप और प्रतिमान, पृ.७६

१७. केदारनाथ अग्रवाल, हे मेरी तुम, पृ. ६८.

❑❑❑

Scanned with CamScanner